लेख : 2050 हिंदी दुनिया की सबसे बड़ी भाषा बनने जा रही है

-दयानंद पांडेय
सर्वोत्तम रीडर्स डाइजेस्ट, जनसत्ता, नई दिल्ली, स्वतंत्र भारत, नवभारत टाइम्स, राष्ट्रीय समाचार फीचर्स नेटवर्क तथा राष्ट्रीय सहारा लखनऊ और दिल्ली में विभिन्न पदों पर कार्यरत।
https://sahityacinemasetu.com/article-2050-tak-hindi-duniya-ki-sabse-badi-bhasha-banne-ja-rahi-hai/

पंख फैला कर उड़ पड़ी है हिंदी

दुनिया अब हिंदी की तरफ़ बड़े रश्क से देख रही है। अमरीका, चीन जैसी महाशक्तियां भी अब हिंदी सीखने की ज़रूरत महसूस कर रही हैं और कि सीख रही हैं क्योंकि हिंदी के जाने बिना वह हिंदुस्तान के बाज़ार को जान नहीं सकते, हिंदी के बिना उनका व्यापार चल नहीं सकता। सो वह हिंदी सीखने, जानने के लिए लालायित हैं क्योंकि हिदी के बिना उनका कल्याण नहीं है। सच यह है कि हिंदी अब अपने पंख फ़ैला करउड़ने को तैयार है। और यकीन मानिए कि आगामी 2050 तक हिंदी दुनिया की सब से बड़ी भाषा बनने जा रही है। अब भविष्य का आकाश हिंदी का आकाश है। अब इसकी उड़ान को कोई रोक नहीं सकता। हिंदी अब विश्वविद्यालयी खूंटे को तोड़ कर आगे निकल आई है। कोई भाषा बाज़ार और रोजगार से आगे बढती है। हिंदी अब बाज़ार की भाषा तो बन ही चुकी है, रोजगार की भी इसमें अपार संभावनाएं हैं। अब बिना हिंदी के किसी का कामचलने वाला नहीं है। क्यों कि कोई भी भाषा विद्वान नहीं बनाते, जनता बनाती है। अपने दैनंदिन व्यवहार से। हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई इस का विधवा विलाप करने से कुछ नहीं होने वाला है। आप ही बताइए कि हिंदी के लिए देश को तोड़ना क्या ठीक होता? और कि क्या देश चलाने में तब क्या हिंदी सक्षम भी थी भला? जो आप हिंदी को राष्ट्रभाषा बना लेते? शासन चला पाते आधी-अधूरी हिंदी के साथ? हालत यह हैकि आज भी तकनीकी शब्दावली हिंदी में हमारे पास पूरी नहीं है। लगभग सभी मंत्रालयों में इस पर काम चल रहा है। भाषाविद लगे हुए हैं। काम गंभीरता से हो रहा है। इसी लिए मैं कह रहा हूं कि हिंदी 2050 में दुनिया की सबसे बड़ी भाषा बनने जा रही है। कोई रोक नहीं सकता। बस ज़रूरी है कि हम आप हिंदी को अपने स्वाभिमान से जोड़ना सीखें। हमारे देश में अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी लाई थी। बाद में मैकाले की शिक्षा पद्धति ने इस को हमारी गुलामी से जोड़ दिया। इसी लिए आज भी कहा जाता है कि अंग्रेज चले गए, अंग्रेजी छोड़ गए। तय मानिए कि अंग्रेजी सीख कर आप गुलाम ही बन सकते हैं, मालिक नहीं। मालिक तो आप अपनी ही भाषा सीख कर बन सकते हैं। चाहे वह हिंदी हो या कोई भी भारतीय भाषा। आज लड़के अंग्रेजी पढ कर यू.एस., यू.के. जा रहे हैं तो नौकर बन कर ही, मालिक बन कर नहीं। अगर 10 साल पहले मुझ से कोई हिंदी के भविष्य के बारे में बात करता तो मैं यह ज़रूर कहता कि हिंदी डूब रही है, लेकिन आज की तारीख में यह कहना हिंदी के साथ ज़्यादती होगी, क्यों कि हिंदी अब न सिर्फ फूलती-फलती दिखती है, बल्कि परवान चढ़ती भी दिखती है। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति बुश तक अमेरीकियों से हिंदी पढ़ने को कह गए हैं। ओबामा भी कह रहे हैं। न सिर्फ़ इतना हिंदी अब ग्लोबलाइज़ भी हो गई है। जाहिर है आगे और होगी, क्यों कि हिंदी ने अब शास्त्रीय और पंडिताऊ हिंदी की कैद से छुटकारा पा लिया है। पाठ्यक्रमों वाली हिंदी के खूंटे से आज की हिंदी ने अपना पिंड छुड़ा लिया है। हिंदी आज के बाज़ार की सब से बड़ी भाषा बन गई है, हालां कि आम तौर पर अंग्रेजी की बेहिसाब बढ़ती लोकप्रियता कई बार संशय में डालती है और लोग कहते हैं कि हिंदी डूब रही है।

हिंदी के प्रकाशक भी जिस तरह लेखकों का शोषण कर सरकारी खरीद के बहाने हिंदी किताबों की लाइब्रेरियों में कैद कर पाठक-लेखक के बीच खाई बना रहे हैं, उस से भी हिंदी डूब रही है। प्रकाशक के पास बाइंडर तक को देने के लिए पैसा है, पर लेखक को देने के लिए उस के पास धेला नहीं है। बीते वर्षों में निर्मल वर्मा की पत्नी गगन गिल को जिस तरह प्रकाशक के खिलाफ खड़ा होना पड़ा , रायल्टी के लिए यह स्थिति हिंदी को डुबोने वाली है। महाश्वेता देवी जैसी लेखिका को भी बांगला प्रकाशक से नहीं, हिंदी प्रकाशक से शिकायत है। यह स्थिति भी हिंदी को डुबोने वाली है। आज हिंदी का बड़ा से बड़ा लेखक भी हिंदी में लेखन कर रोटी, दाल या घर नहीं चला सकता। यह स्थिति भी हिंदी को डुबोने वाली है। एक आंकड़ा भी हिंदी का दिल हिला देने वाला है। वह यह कि हर छठवें मिनट में एक हिंदी भाषी अंग्रेजी बोलने लगता है। यह चौंकाने वाली बात एंथ्रोपॉलीजिकल सर्वे आफ़ इंडिया ने अपनी ताज़ी रिपोर्ट में बताई है। संतोष की बात है कि इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया है हर पांच सेकेंड में हिंदी बोलने वाला एक बच्चा पैदा हो जाता है। गरज यह है कि हिंदी बची रहेगी। पर सवाल यह है कि उस की हैसियत क्या होगी? क्यों कि रिपोर्ट इस बात की तसल्ली तो देती है कि हिंदी भाषियों की आबादी हर पांच सेकेंड में बढ़ रही है, लेकिन साथ ही यह भी चुगली खाती है कि हिंदी भाषियों की आबादी बेतहाशा बढ़ रही है। जिस परिवार की जनसंख्या ज्यादा होती है, उसकी दुर्दशा कैसे और कितनी होती है यह भी हम सभी जानते हैं। हिंदी आज से 10-20 साल पहले जिस गति को प्राप्त हो रही थी, हिंदी सप्ताह व हिंदी पखवारे में समा रही थी, लग रहा था कि हिंदी को बचाने के लिए जल्दी ही कोई परियोजना भी शुरू करनी पड़ेगी। जैसा कि पॉली और संस्कृत भाषाओं के साथ हुआ है। लेकिन परियोजनाएं क्या भाषाएं बचा पाती हैं? सरकारी आश्रय से भाषाएं बच पाती हैं? अगर बच पातीं तो उर्दू कब की बच गई होती। सच यह है कि कोई भी भाषा बचती है तो सिर्फ़ इस लिए कि उस का बाज़ार क्या है? उस की ज़रूरत क्या है? उस की मांग कहां है? वह रोजगार दे सकती है क्या? या फिर रोजगार में सहायक भी हो सकती है क्या? अगर नहीं तो किसी भी भाषा को आप हम क्या कोई भी नहीं बचा सकता। संस्कृत, पाली, उर्दू जैसी भाषाएं अगर बेमौत मरीं हैं तो सिर्फ़ इस लिए कि वह रोजगार और बाजार की भाषाएं नहीं बन सकीं। चाहें उर्दू हो या संस्कृत हो या पाली, जब तक वह कुछ रोजगार दे सकती थीं, चलीं। लेकिन पाली का तो अब कोई नामलेवा ही नहीं है। बहुतेरे लोग तो यह भी नहीं जानते कि पाली कोई भाषा भी थी। इतिहास के पन्नों की बात हो गई है पाली। लेकिन संस्कृत? वह पंडितों की भाषा मान ली गई है और जनबहिष्कृत हो गई है। इस लिए भी कि वह बाज़ार में न पहले थीं और न अब कोई संभावना है। उर्दू एक समय देश की मुगलिया सल्तनत में सिर चढ़ कर बोलती थी। उस के बिना कोई नौकरी मिलनी मुश्किल थी। जैसे आज रोजगार और बाज़ार में अंग्रेजी की धमक है, तब वही धमक उर्दू की होती थी। बड़े-बड़े पंडित तक तब उर्दू पढ़ते-पढ़ाते थे। मुगलों के बाद अंग्रेज आए तो उर्दू धीरे-धीरे हाशिए पर चली गई। फिर जैसे संस्कृत पंडितों की भाषा मान ली गई थी, वैसे ही उर्दू मुसलमानों की भाषा मान ली गई। आज की तारीख में उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश में राजनीतिक कारणों से वोट बैंक के फेर में उर्दू दूसरी राजभाषा का दर्जा भले ही पाई हुई हो, लेकिन रोजगार की भाषा अब वह नहीं है। और न ही बाज़ार की भाषा है। सो, उर्दू भी अब इतिहास में समाती जाती दिखती है। उर्दू को बचाने के लिए भी राजनेता और भाषाविद् योजना-परियोजना की बतकही करते रहते हैं। पुलिस, थानों तथा कुछ स्कूलों में भी मूंगफली की तरह उर्दू-उर्दू हुआ है। पर यह नाकाफी है और मौत से बदतर है।

हां, हिंदी ने इधर होश संभाला है और होशियारी दिखाई है। रोजगार की भाषा आज अंग्रेजी भले हो पर बाज़ार की भाषा तो आज हिंदी है। और लगता है आगे भी रहेगी क्या, दौड़ेगी भी । कारण यह है कि हिंदी न विश्वविद्यालयी हिंदी के खूंटे से अपना पिंड छुड़ा लिया है। शास्त्रीय हदों को तोड़ते हुए हिंदी ने अपने को

बाज़ार में उतार लिया है और हम विज्ञापन देख रहे हैं कि दो साल तक टॉकटाइम फ्री। लाइफ़ टाइम प्रीपेड। दिल मांगे मोर हम कहने ही लगे हैं। इतना ही नहीं, अंग्रेजी अखबार अब हिंदी शब्दों को रोमन में लिख कर अपनी अंग्रेजी हेडिंग बनाने लगे हैं। अरविंद कुमार जैसे भाषाविद् कहने लगे हैं कि विद्वान भाषा नहीं बनाते। भाषा बाज़ार बनाती है। भाषा व्यापार और संपर्क से बनती है। हिंदी ने बहुत सारे अंग्रेजी, पंजाबी, कन्नड़, तमिल आदि शब्दों को अपना बना लिया है। इस लिए हिंदी के बचे रहने के आसार तो दिखते हैं। आधुनिक हिंदी के विकास एवं विस्तार में जाएं तो हम पाते हैं कि भिन्न-भिन्न भाषाओं के देश में आने, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के संपर्क में आने से हिंदी को बखूबी बढ़ावा मिला है। हिंदी से यहां हमारा अभिप्राय खड़ी बोली से है। हम ब्रज भाषा,भोजपुरी, मैथिली, अवधी आदि भाषाओं के पिछड़ेपन को देखें तो बात ज़्यादा आसानी से समझ में आती है। वह भाषाएं अपने पुराने कलेवर राधा-कृष्ण (ब्रज भाषा), रामचरित मानस (अवधी) से आगे कुछ लेने को तैयार नहीं। इन के बोलने वालों ने अपने को भूतकाल में कैद कर रखा है। लेकिन खड़ी बोली यानी हिंदी ने ऐसा नहीं किया है। अमीर खुसरो जैसों ने हिंदी को एक नया विकास दिया है। नया तेवर और नया शिल्प दिया। बाद में इस की प्रगति उर्दू के नाम पर जो उस जमाने में अलग भाषा नहीं बन पाई थी, बल्कि हिंदी को देवनागरी की जगह फारसी लिपी में लिखी भर गई थी। कबीर, मीर तकी मीर और नज़ीर अकबराबादी जैसे शायर इस बात के प्रमाण हैं। फ़ारसी लिपी में लिखी जाने से पद्मावत फ़ारसी की नहीं बन जाती। वह रहती अवधी ही है। और हिंदी की बन जाती है । ऐसे उदाहरण इस तरफ भी इशारा करते हैं कि अवधी आदि भाषाओं ने अपनी शब्दावली में नए शब्द लेने से इंकार कर दिया और नए भावों को अपनी भाषा में नहीं लिया, तो पिछड़ी रह गई। हमारी हिंदी के पाठ्यक्रमों में प्राचीन काव्य और साहित्य के नाम पर यही आंचलिक भाषाएं और उन के कवि सम्मिलित किए जाते हैं। जो बहुत हद तक इस के पीछे उन्नीसवीं शताब्दी की वह होड़ है, जो अंग्रेजी शिक्षाविदों ने हिंदी और उर्दू को अलग करने के लिए इन भाषाओं को धार्मिक रंग देने के लिए किया।

खड़ी बोली के विकास में अमीर खुसरो के बाद नई बातों, भावों, विषयों को लेने और उठाने की क्षमता पैदा हो चुकी थी। इस लिए उस का विकास अनुवादों, शुरू में बाइबिल आदि, बाद में समाचारों, लेखों, कविता, कहानियों आदि का विकास तेज़ी से हुआ। तो इस के पीछे पढ़े-लिखे लोगों की पूरी फौज थी। यह लोग अंग्रेजी पढ़े-लिखे थे। इन सब ने नए भाव लिए थे, नई जानकारी पाई थी। हमारा आधुनिक हिंदी साहित्य अगर आज आधुनिक है तो इस के पीछे स्वयं अग्रेजी और अंग्रेजी के माध्यम से विश्व भर के साहित्य से हमारा संपर्क है। हमारी आज़ादी की लड़ाई, आर्य समाज जैसे सुधार आंदोलनों के पीछे अंग्रेजी भाषा और यूरोप के सामाजिक, राजनैतिक विचारधाराओं का हमारे नेताओं द्वारा आत्मसात किया जाना भी एक महत्वपूर्ण कारण है। स्वामी दयानंद एक हद तक क्रिश्चियन आंदोलन के विरुद्ध हिंदू धर्म के समर्थन और उस की रक्षा का कार्य कर रहे थे। कई बार तो लगता कि अगर अंग्रेजी के माध्यम से हम लोग पूरी दुनिया के संपर्क में न आए होते या खुदा ना खास्ता 1857 का आंदोलन सफल हो गया होता तो शायद हम आज तक वहीं होते, जहां आज अफगानिस्तान या ईरान हैं। बात कुछ अटपटी है ज़रूर और तल्ख भी, पर सच्चाई यही है। अब वैश्वीकरण के युग में देश-विदेश से हम लोगों का संबंध केवल उच्च वर्ग तक ही सीमित नहीं रह पाएगा। गांव के लोग, छोटी जातियों के लोग भी अब तेज़ी से अंग्रेजी पढ़ रहे हैं। जैसे उच्च वर्ग के लोगों ने अपने भारतीय संस्कार नहीं छोड़े, बल्कि उन्हें बदला। उसी तरह यह नए लोग बहुत गहरे तक अंग्रेजी शिक्षा पा कर अपना सुधार तो करेंगे ही अपनी भाषा को भी नया रंग देंगे। आज मध्यम वर्ग जो अंग्रेजी मिश्रित भाषा बोलता है, वह इस बात का प्रमाण है कि हम हिंदी में नई शब्दावली स्वीकार कर रहे हैं। हमने अरबी, फारसी से शब्द लिए तो हम गरीब नहीं, अमीर हुए। और आज अंग्रेजी से हिंदी में कुछ

शब्द ले रहे हैं तो भी हम अमीर ही हो रहे हैं, गरीब नहीं। आज की पीढ़ी ने और आज के अखबारों ने जो नई भाषा बनानी शुरू की है, वही हिंदी को और हमें आगे ले जाएगी। पंडिताऊ हिंदी से छुट्टी पा कर ही हिंदी गद्य और पद्य में क्रांतिकारी बदलाव स्पष्ट दिखाई देते हैं।

हिंदी के भविष्य की बात करें और हिंदी सिनेमा की बात न करें तो शायद यह गलती होगी। सच यही है कि हिंदी भाषा के विकास में हमारी हिंदी फ़िल्मों और हिंदी गानों की भी बहुत बड़ी भूमिका है। सिनेमा दादा फाल्के के जमाने से ले कर अब तक हमारे लिए हमेशा नई और विदेशी टेक्निक थी और रहेगी। बोलने वाली फ़िल्मों का अविष्कार भी हमारे लिए नया जमाना ले कर आया। हमने विदेशी टेक्निक का इस्तेमाल अपने लाभ के लिए किया। दादा फाल्के ने पहली फ़िल्म राजा हरिश्चंद्र बनाई थी। दादा फाल्के ने अपनी देखी पहली फ़िल्म के अनुभव पर लिखा है कि परदे पर मैं क्राइस्ट को देख रहा था और मेरे मन में कृष्ण का चरित्र चित्रों में चल रहा था। हिंदी फ़िल्में पूरी दुनिया में अभारतीयों को भी आकर्षित करती हैं। एक समय आवारा हूं जैसे गीत दुनिया भर के लोग गाते दिखते थे। रूस में, मिश्र में, अरब में, हर कहीं। आज फ़िल्म और फ़िल्मी गीत प्रवासी भारतीयों को भारत से जोड़े रखती है। उन की वह संतान जो विदेशों में पैदा हुई है और हिंदी पढ़ना-लिखना नहीं जानती है, लेकिन हिंदी फ़िल्मी गीत समझती है। और उन्हें सुनना चाहती है। हिंदी पढ़ना चाहती है।

यह अद्‌भुत संयोग ही है कि अमरीका में एक तरफ पूर्व राष्ट्रपति जार्ज बुश अमेरिकियों से हिंदी पढ़ने के लिए कह गए तो आज ओबामा भी हिंदी पढने को कह रहे हैं। तो दूसरी तरफ अमरीका में ही एक भारतीय अविनाश चोपड़े ने रोमन स्क्रिप्ट में हिंदी लिखने की जो नई विधि (आईटीआरएएनएस) बनाई है, उस के द्वारा अनगिनत लोग हिंदी में लिख रहे हैं। यहां तक कि संस्कृत का डॉ. लोनियर का प्रसिद्ध कोश भी अब इंटरनेट पर आईटीआरएएनएस में उपलब्ध है। यह हिंदी के विकास का नया आकाश है। इंटरनेट पर या मोबाइल फ़ोन पर रोमन लिपि में ही सही हिंदी में चैटिंग और चिट्ठी-पत्री अबाध रूप से जारी है। अब विभिन्न टीवी चैनलों पर जो हिंदी बोली जा रही है, वह सारी दुनिया में पहुंच रही है, रेडियो की समाचारी हिंदी, हिंदी भाषा को सीमित कर रही थी, अब वह हिंदी अपने रुपहले पंख फैला कर उड़ पड़ी है। उड़ पड़ी है अनंत आकाश को नापने।